अन्तहीन... क्या? क्यों? कहाँ? कैसे?

स्वतंत्र रिछारिया

शिक्षा सम्बन्धी सिद्धान्त या विचार एक बात पर प्रमुखता से ध्यान इंगित करते हैं कि बच्चों के सीखने की प्रक्रिया में शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण एवं आवश्यक कार्य बच्चों में विवेचनात्मक-तार्किक चिन्तन का विकास करना है ताकि बच्चे सिर्फ रटकर सूचनाएँ एकत्रित न करें बल्कि विषयों व समाज की घटनाओं के प्रति तार्किक रूप से अपनी समझ विकसित करते हुए ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया में सहभागी हो सकें।

पिछले कई वर्षों से शिक्षा जगत में कार्य करते हुए, बच्चे के सीखने सम्बन्धी सिद्धान्तों, विचारों (पियाजे, चौम्स्की, जॉन होल्ट, वायगोट्स्की, एरिक एरिक्सन) का अध्ययन-अध्यापन कर रहा हूँ। वर्तमान में सभी शैक्षिक सिद्धान्तों, शोध एवं दस्तावेज़ों का सार है कि बच्चे समाज में विभिन्न संस्थाओं एवं वयस्कों से अन्तःक्रिया करते हुए स्वयं ही ज्ञान का सृजन करते हैं। घर, परिवार एवं स्कूल में महज़ उनकी जिज्ञासा को प्रोत्साहित करते हुए सीखने हेतु अनुकूल वातावरण निर्मित करने की आवश्यकता होती है।

पिछले कुछ समय से अपने ढाई साल के बच्चे की गतिविधियों का अवलोकन करते हुए, इन शैक्षिक सिद्धान्तों और बच्चों के सीखने की प्रक्रिया को व्यावहारिक रूप में अनुभव करने का अवसर मिल रहा है, जिससे

कई और बातें स्पष्ट हो रही हैं, जो शैक्षिक चर्चाओं और मन्थनों आदि से भी समझ आना मुश्किल होती हैं। बच्चों के लिए 2 से 4 वर्ष की उम्र वह समय होता है जब वे बोलना, अभिव्यक्त करना एवं नए शब्दों के साथ कुछ वाक्यों को गढ़ना प्रारम्भ कर रहे होते हैं। बाल्यावस्था का यह समय जिज्ञासा का चरमकाल भी कहा जा सकता है क्योंकि इस समय बच्चा अपने आसपास के सभी सजीवों एवं निर्जीवों के बारे में कौतूहल और उत्सुकता से जानना चाहता है।

मेरे बच्चे के जागने के साथ ही उसके क्या... क्यों... कहाँ... कैसे... जाग जाते हैं, और रात्रि में उसके सोने तक निरन्तर वह उन्हें अपने साथ ही रखता है। इस समय उसके पास हज़ारों क्या... क्यों... कहाँ... कैसे... हैं। जो शायद उसके सीखने, समझने और व्यक्तित्व निर्माण की प्रक्रिया के औज़ार हैं।

समाजीकरण और बच्चे के विकास का यह अति महत्वपूर्ण समय है, जब बच्चे की जिज्ञासा, उसके प्रश्नों, उसकी बातों आदि को आदर और कोमलता से प्रोत्साहित करने की आवश्यकता होती है। लेकिन इस समय घर और स्कूल उसकी सहज एवं मौलिक सीखने, जानने की प्रक्रिया को जाने-अनजाने बाधित कर रहे होते हैं क्योंकि वयस्कों के पास धैर्य और विनम्रता के साथ बच्चों के अन्तहीन प्रश्नों और बातों को सुनने के लिए समय ही नहीं है। और अगर समय है भी तो इन अन्तहीन प्रश्नों और बातों की प्रक्रिया उन्हें निरर्थक-सी लगती है।

बच्चे और समाज

आधुनिक काल में बच्चों के सीखने एवं ज्ञान अर्जन हेतु स्कूल और शिक्षक को ही सबसे महत्वपूर्ण माना जाता है। समाज और परिवार में यह सामान्य मान्यता है कि घर में रहने वाले 2 से

3 वर्ष के बच्चे जो भाषा बोल रहे हैं, जो प्रश्न पूछ रहे हैं, जो तर्क कर रहे हैं, वयस्कों के व्यवहार का अनुकरण करके जिस व्यक्तित्व को आत्मसात कर रहे हैं, वह सब खेल है, और सही एवं वास्तविक शिक्षा व सीखना तो स्कूल जाने पर ही प्रारम्भ होगा जबकि हकीकत कुछ और ही है। स्कूल जाने के पूर्व बच्चा बहुत कुछ भाषा, सांस्कृतिक तत्व, व्यवहार आदि सीख चुका होता है।

यह बच्चों के लिए समाजीकरण, व्यक्तित्व निर्धारण और सीखने के लिए सबसे महत्वपूर्ण समय है। ऐसे में बच्चों को वयस्कों द्वारा उनके प्रति स्नेह, प्रेम, धैर्य, आदर और प्रोत्साहन की आवश्यकता होती है। शिक्षा के दर्शनशास्त्र एवं शिक्षा के समाजशास्त्र में जिन शैक्षिक एवं सामाजिक मूल्यों - सहिष्णुता, प्रेम, धैर्य, तार्किकता, वैज्ञानिक चेतना, सहयोग, लोकतांत्रिक मूल्य आदि - की बात की जाती है, उसका व्यावहारिक रूप बच्चे शायद ही अपने प्रारम्भिक काल में घर और स्कूल में वयस्कों के आचरण में देख पाते हैं। फलस्वरूप बच्चे अपने आसपास वयस्कों के इस व्यवहार को ही वास्तविक मानकर अपने व्यक्तित्व में समाहित कर लेते हैं।

जब बच्चा देखता है कि उसके प्रश्नों का जवाब नहीं दिया जाता है तो उसे लगता है कि प्रश्न पूछना कोई अस्वाभाविक प्रक्रिया है और फिर धीरे-धीरे वह प्रश्न पूछना ही बन्द कर

संवाद - 1

सम्यकः हम खाना क्यों खा रहे हैं?

पापाः हमें भूख लगी है इसलिए खाना खा रहे हैं।

सम्यकः हमें भूख क्यों लगती है?

पापाः हमारा पेट खाली हो जाता है इसलिए भूख लगती है।

सम्यकः हमारा पेट खाली क्यों हो जाता है?

जवाब...

संवाद - 2

सम्यकः पापा अँधेरा क्यों हो गया?

पापाः रात हो गई इसलिए अँधेरा हो गया।

सम्यकः रात क्यों हो गई?

पापाः सूरज छुप गया है इसलिए रात हो गई।

सम्यकः सूरज क्यों छुप जाता है?

जवाब...

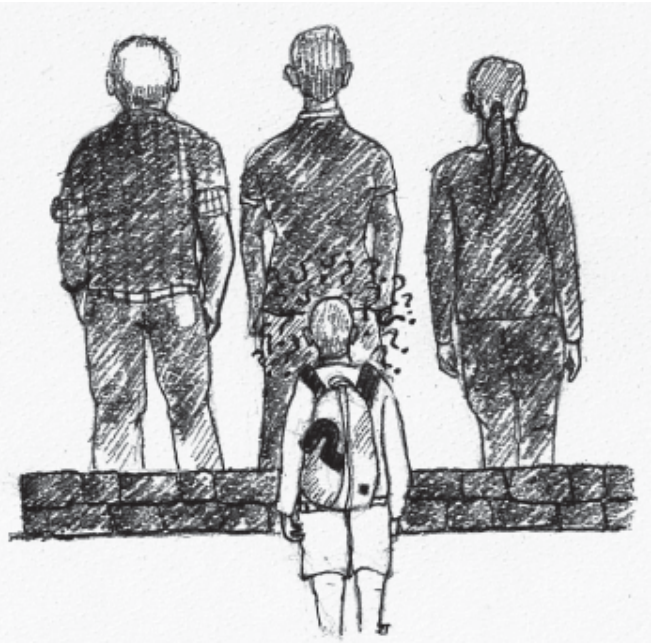

देता है। यह स्वभाव वयस्क और वृद्ध होने तक उसके साथ ही बना रहता है।

इस तथ्य को हमारे समाज और संस्कृति में महसूस किया जा सकता है। समाज में वयस्क भी अपने आसपास और जीवन से जुड़ी बातों, मुद्दों, राजनीति, धर्म, सामाजिक असमानता आदि पर प्रश्न नहीं पूछते हैं क्योंकि बचपन में पूछने की जिस स्वाभाविक और सहज प्रक्रिया को रोका गया, उससे ही समाज में मौन की संस्कृति (कल्चर ऑफ साइलेन्स) उत्पन्न होती है।

'बच्चों की आवाज़ व अनुभवों को कक्षा में अभिव्यक्ति नहीं मिलती। प्रायः केवल शिक्षक का स्वर ही सुनाई देता है। बच्चे केवल अध्यापक के सवालों का जवाब देने के लिए या अध्यापक के शब्दों को दोहराने के लिए ही बोलते हैं। कक्षा में वे शायद ही कभी स्वयं कुछ करके देख पाते हैं। उन्हें पहल करने के अवसर भी नहीं मिलते हैं। किताबी ज्ञान को दोहराने की क्षमता के विकास की बजाय पाठ्यचर्या बच्चों को इतना सक्षम बनाए कि वे अपनी आवाज़ ढूँढ़ सकें, अपनी उत्सुकता का पोषण कर सकें, स्वयं करें, सवाल पूछें, जाँचें-परखें और अपने अनुभवों को स्कूली ज्ञान के साथ जोड़ सकें।' (एनसीएफ-2005)

आखिर ऐसा क्यों?

बच्चों के सीखने के इस स्वर्णिम काल के प्रति घर, स्कूल एवं समाज में वयस्कों द्वारा इस तरह के गैर-ज़िम्मेवार रवैये का क्या कारण हो सकता है? एक कारण हो सकता है कि वयस्क बच्चों के सहज, मौलिक प्रश्न और बातों को उनके सीखने की प्रक्रिया में ज़्यादा महत्वपूर्ण मानते ही नहीं हैं। दूसरा कारण यह भी हो सकता है कि वास्तव में वयस्कों के पास बच्चों के क्या... क्यों... कहाँ... कैसे... आदि का ऐसा उत्तर ही नहीं है जो बच्चों के स्तर पर उनकी जिज्ञासा को शान्त करने का प्रयास करते हुए (हालाँकि प्रयास असफल ही होगा) उनकी सीखने की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करे। मैंने अपने और बच्चे के बीच होने वाले संवाद में अक्सर यह अनुभव किया है कि उसके 3 से 4 'क्या' और 'क्यों' के बाद मेरे पास एक सन्तुलित जवाब उपलब्ध नहीं होता है जो तुरन्त उसे दिया जा सके। बच्चों के साथ संवाद के समय ऐसी परिस्थिति में सामान्यतः वयस्कों द्वारा तीन निर्णय लिए जाते हैं...

- पहला, वयस्क बच्चों को 3-4 'क्या' और 'क्यों' तक पहुँचने से पहले ही रोक देते हैं।
- दूसरा, बच्चे के 3-4 'क्या' और 'क्यों' के बाद डाँटकर, क्रोध से या बड़े होने का भय दिखाकर बच्चे को शान्त कर देते हैं।
- तीसरा, कुछ विनम्र वयस्क चालाकी से उसके प्रश्न या बात को किसी और बात से बदलने का प्रयास करते हैं।

जबकि वयस्कों का यह सामाजिक और नैतिक दायित्व है कि बच्चों के प्रश्नों का वास्तविक और तार्किक जवाब उन्हें दें। लेकिन जवाब के वास्तविक और तार्किक होने के साथ यह भी अति आवश्यक है कि वह जवाब बच्चे के स्तर पर समझने में सहायक भी होना चाहिए।

'बच्चे उसी वातावरण में सीख सकते हैं जहाँ उन्हें लगे कि उन्हें महत्वपूर्ण माना जा रहा है। हमारे स्कूल आज भी सभी बच्चों को ऐसा महसूस नहीं करवा पाते। सीखने का आनन्द व सन्तोष के साथ रिश्ता होने की बजाय भय, अनुशासन व तनाव से सम्बन्ध हो तो यह सीखने के लिए अहितकारी होता है।' (एनसीएफ - 2005)

इसलिए आवश्यकता है कि समाज, परिवार और स्कूल में वयस्क बच्चों के इस महत्वपूर्ण दौर में उन्हें उनकी सहज और मौलिक प्रक्रियाओं, गतिविधियों को सहिष्णुता, प्रेम, धैर्य और आदर के साथ प्रोत्साहित करें ताकि समाज जिन शैक्षिक एवं सामाजिक मूल्यों को बच्चों में प्रतिस्थापित करना चाहता है, वह वास्तविक रूप में फलीभूत हो सकें ।

स्वतंत्र रिछारियाः समाजशास्त्र में एम.ए., एम.फिल. व पीएच.डी.। पिछले दस वर्षों से शिक्षा और सामाजिक विकास के क्षेत्र में योगदान दे रहे हैं। स्वास्थ्य शिक्षा के क्षेत्र में बीबीसी मीडिया एक्शन इंडिया के साथ मिलकर काम किया है। वर्तमान में बुन्देलखण्ड में आदिवासी शिक्षा और ग्रामीण आजीविका के क्षेत्र में *विकास पथ* संस्था के साथ कार्य कर रहे हैं।
सभी चित्रः शैलेश गुप्ताः आर्किटेक्ट और चित्रकार जो आज भी बचपन को संजोए रखना चाहते हैं। एमआईटीएस, ग्वालियर से आर्किटेक्चर की पढ़ाई। कहानियाँ सुनने और सुनाने का शौक है। भोपाल में रहते हैं।